COURSE - NEO CLASSICAL THEORIES

Unit-4 -Exchange Theory

By Dr. Malti
Dept. of Sociology

सामाजिक विनिमय सिद्धान्त
(Social Exchange Theory)

हम रोज चर्चा करते हैं कि बाजार में कोई भी वस्तु मुफ्त में नहीं मिलती। यह सम्भव है कि कुछ वस्तुएं महंगी हों और कुछ सस्ती। इटली के समाजशास्त्री विल्फ्रेडो पेरेटो एक बार किसी गोष्ठी में गये। उन दिनों में अर्थशास्त्र को सिद्धान्त के रूप में सही जाना जाता था। लोगों का विचार था कि अर्थशास्त्र जैसे सामाजिक विज्ञान में सिद्धान्त निर्माण की कोई गुंजाइश नहीं। जब पेरेटो ने दृढ़तापूर्वक अपने तर्कों से यह सिद्ध किया कि अर्थशास्त्र के भी सिद्धान्त हैं, तब उनकी कटु आलोचना हुई, उनकी जमकर खिंचाई भी हुई, शाम को पेरेटो टहलते हुये गोष्टी के एक सहभागी से टकराये। उन्होंने जानकारी चाही- क्या इतने बड़े शहर में कोई ऐसा होटल मिलेगा जहां मुफ्त में खाना मिल सके? सहभागी हंसा, कोई होटल मुफ्त में खाना तो कैसे दे सकता है? हां, ऐसे होटल अवश्य मिलेंगें जहां सस्ता खाना मिल सकता है। तपाक से पेरेटो बोलेः यही तो अर्थशास्त्र का सिद्धान्त है, कोई चीज मुफ्त में नहीं मिलती। प्रत्येक वस्तु की लागत होती है, बिक्री मूल्य होता है। बहुत थोड़े में सामाजिक विनिमय सिद्धान्त का यही सार है।

हम बाजार जाते हैं, चीनी खरीदते हैं और उसके दाम चुका देते हैं। अर्थशास्त्र में उत्पादन, वितरण, विनिमय एवं उपभोग ये बुनियादी सिद्धान्त हैं। सामाजिक विनिमय सिद्धान्तवेत्ता अर्थशास्त्र के इन बुनियादी तत्वों को नहीं छूते। लेकिन उनका कहना है कि सामाजिक व्यवहार में भी लोग विनिमय पद्धति को अपनाते हैं। हम जब अपने पड़ौसी, रिश्तेदार और मित्रों के यहां शादी-ब्याह, मौत मरण आदि अवसरों पर जाते हैं, जो कुछ दस्तुर हैं, जिन्हें पूरा करते हैं। तब हम भी आशा करते हैं कि हमारे शुभ-अशुभ अवसरों पर हमारे हितेच्छु हमने जैसा व्यवहार किया वैसा हमारे प्रति भी करेंगे। इन सिद्धान्तवेत्ताओं के अनुसार

सम्पूर्ण समाज मानों एक बाजार है, जिसमें व्यवहार करने वाला प्रत्येक व्यक्ति चीनी खरीदने वाले व्यक्ति की तरह, खरीद भरोख्त करने वाला है। जैसे बाजार में एक ही वस्तु के कई विकल्प हैं– धोती सस्ते दामों की है, महंगी दामों की भी है और बहुत महंगे दामों की भी है। जिसकी जितनी क्षमता है उसी के अनुसार वह धोती के कई मूल्य विकल्पों में से एक विकल्प अपनाता है। सामाजिक व्यवहार में भी विकल्प हैं, और अपनी सामाजिक स्थिति के अनुसार व्यक्ति एक या अनेक विकल्पों को अपना लेता है।

विनिमय सिद्धान्तवेत्ताओं का केन्द्रीय संदर्श सामाजिक विनिमय है। हमारे चारों ओर पारस्परिक व्यवहार विनिमय के माध्यम से होता है। दफ्तर के बॉस को हम शिष्टाचार या चापलूसी से खुश रखते हैं। वह भी इसके बदले में हमारे ऊपर अपनी "कृपा" बनाये रखता है। लोगों का दरबारी व्यवहार और कुछ न होकर सामाजिक विनिमय है। लेकिन यह विनिमय सहज रूप में नहीं होता। इसके भी कुछ सिद्धान्त हैं, जिनका हम आगे चलकर खुलासा करेंगे।

बौद्धिक आधार (Intellectual Roots)

आधुनिक विनिमय सिद्धान्तवेताओं में *जार्ज होमन्स* (George C. Homans), पीटर ब्लॉ (Peter M. Blau) और माइकेल हेचर (Michael Hechter) के नाम विशेष रूप से लिये जाते हैं। होमन्स ने विनिमय व्यवहारवाद को विकसित किया, ब्लॉ ने संरचनात्मक विनिमय सिद्धान्त को और हेचर ने विवेकी सिद्धान्त को रखा है। ये सभी विनिमय सिद्धान्तवेत्ता है। इनमें विविधता है। ये एक दूसरे से असहमत भी हैं। होमन्स समूह पर बहुत जोर देते हैं, ब्लॉ संरचना को केन्द्रीय स्थान देते हैं और हेचर विवेकी व्यवहार को प्राथमिक स्थान देते हैं। अवधारणा अन्तर के होते हुये भी सभी विनिमय सिद्धान्तवेता इस तथ्य को मानकर चलते हैं कि *प्रत्येक मनुष्य अपनी अन्तःक्रियाओं में दूसरों से अधिकतम लाभ लेना चाहता है*। यदि अन्तःक्रिया से कोई लाभ न हो, तो शिष्टाचारवश कब तक मृदुभाषी रहा जा सकता है? कब तक व्यवहार की निरन्तरता बनी रह सकती है?

समाजशास्त्रीय सिद्धान्तों में विनिमय सिद्धान्त कोई एक अलग-थलग सिद्धान्त नहीं है। यह सिद्धान्त वास्तव में सिद्धान्तों की परम्परा की एक कड़ी है। विनिमय सिद्धान्तवेताओं ने विभिन्न समाज विज्ञान सिद्धान्तों से खुले हाथों से लिया है। (1) क्लासिकल अर्थशास्त्रियों से हमने उपयोगितावाद को, (2) फ्रेजर, मेलिनोस्की, मार्शल मॉस और लेवी स्ट्रॉस से इसने सामाजिक मानवशास्त्र को और (3) मनोविज्ञान से व्यवहारवादी मत को लिया है।

समाजशास्त्र की भी अपनी एक परम्परा है। उदाहरण के लिये मार्क्स ने अपने संघर्ष सिद्धान्त में, जब स्रोतों की चर्चा की तब उन्होंने, विनिमय सिद्धान्त की रूपरेखा प्रस्तुत की थी। इसी तरह जार्ज सीमेल जहां पूंजी के दर्शन की व्याख्या करते हैं, तब वे भी विनिमय सिद्धान्त का उल्लेख करते हैं। ये सब कुछ वृहद् बौद्धिक आधार हैं जिनके संदर्भ में हम हाल में प्रतिपादित विनिमय सिद्धान्तों की व्याख्या करेगें।

क्लासिकल अर्थशास्त्रियों की धरोहर : उपयोगितावाद

1770 और 1850 के बीच अर्थशास्त्र के सैद्धान्तीकरण में एडम स्मिथ डेविड रिकार्डो, जोन स्टुअर्ट मिल तथा जेरेसी बेन्थम के नाम विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं। इनमें से प्रत्येक अर्थशास्त्री ने आर्थिक व सामाजिक विचारधारा में अद्वितीय योगदान दिया है। सभी के सिद्धान्त का अपना एक निजी उपागम है। फिर भी सामान्य रूप से देखें तो ये सभी विचारक इस मान्यता को लेकर चलते हैं कि *मनुष्य मूल में एक विवेकशील प्राणी है और हर तरह के अपने प्रयास में वह यह चाहता है कि उसे अधिकतम लाभ पहुंचे*। इसे अर्थशास्त्र में उपयोगितावाद कहते हैं। उपयोगितावाद के इस सिद्धान्त से विनिमय सिद्धान्त ने बहुत कुछ ग्रहण किया है।

हाल में समाजशास्त्र में जो सैद्धान्तिक नई विचारधाराएं आयी हैं, उनमें अर्थशास्त्र का उपयोगितावाद महत्वपूर्ण है। आखिर उपयोगितावाद है क्या? उपयोगितावादियों का कहना है कि प्रत्येक व्यक्ति बाजार में खरीद फरोख्त करने आता है। इस बाजार में गला काटने वाली प्रतियोगिता रहती है। जब उपभोक्ता सौदा करने के लिये इस बाजार में आता है तो उसे बिकने वाली वस्तुओं के बारे में लगभग पर्याप्त जानकारी होती है। वस्तु प्राप्त करने के पहले वह विभिन्न माध्यमों से वस्तु के बारे में जानकारी लेने का प्रयत्न करता है। वह यह भी पता लगा लेता है कि जिस वस्तु की वह खरीद करना चाहता है, उस वस्तु के कितने और कैसे विकल्प बाजार में उपलब्ध हैं। इस जानकारी के बाद वह वस्तु और उसकी तुलना में खर्च की गई राशि का विवेकपूर्ण विवेचन करता है। *उपयोगिता का सार विवेकपूर्ण ढंग से वस्तु का अधिकतम लाभ लेना है*।

जोनाथन टर्नर ने सामाजिक विनिमय सिद्धान्त के निर्माण में अर्थशास्त्र की उपयोगितावाद की भूमिका को स्पष्ट करते हुए लिखा है :

1. विनिमय सिद्धान्त में व्यक्ति अधिकतम लाभ के पीछे तो नहीं दौड़ता, लेकिन उसकी पूरी कोशिश होती है कि सामाजिक अन्तःक्रिया से उसे थोड़ा-बहुत लाभ अवश्य मिले।
2. मनुष्य पूर्ण रूप से विवेकी नहीं होता, लेकिन अपनी सामाजिक अन्तःक्रियाओं मे वह यह हिसाब जरूर करना चाहता है कि उसे इन अन्तःक्रियाओं से कितना लाभ हुआ।
3. यह सही है कि किसी भी वस्तु के उपलब्ध विकल्पों के बारे में मनुष्य को पूरी जानकारी नहीं होती। लेकिन वह विकल्पों की थोड़ी बहुत जानकारी तो स्थानीय स्तर पर अवश्य रखता है। इसी आधार पर वह लागत और लाभ का हिसाब-किताब करता है।
4. मनुष्य को हमेशा किसी न किसी दबाव में आकर अन्तःक्रियाएं करनी पड़ती हैं, फिर भी हर व्यक्ति यह चाहता है कि उसकी अन्तःक्रियाओं से अभी या बाद में चलकर थोड़ा-बहुत लाभ अवश्य मिले।
5. लाभ तो हर कोई चाहता है। नकद पैसा हो तो उपलब्ध विकल्पों से अधिकतम लाभ

लिया जा सकता है, लेकिन हर खरीद में स्त्रोत चाहिये यानि धन कहां से आयेगा, कितना धन व्यक्ति के पास है, इत्यादि। इसलिये अन्तःक्रियाओं की सौदेबाजी में मनुष्य के स्त्रोत भी महत्वपूर्ण हैं।

6. विनिमय में मनुष्य भौतिक लक्ष्यों की प्राप्ति तो करता है, लेकिन कई बार अभौतिक स्त्रोतों जैसे-संवेग, सेवाएं, प्रतीक इत्यादि द्वारा भी वह लाभ लेना चाहता है।

अर्थशास्त्र के उपयोगितावादी सिद्धान्त की प्रारम्भ में मानवशास्त्रियों ने कई तरह की आलोचनाएं की हैं। एक तरह से इन मानवशास्त्रियों ने उपयोगितावाद को विवाद का एक मुद्दा ही बना दिया। हाल में विनिमय सिद्धान्त का निर्माण जिस तरह से हो रहा है, लगता है, उस पर उपयोगितावाद का कोई सीधा प्रभाव नहीं है। विनिमय सिद्धान्त ने जो कुछ ग्रहण किया है, अप्रत्यक्ष ही है। वास्तव में 20वीं शताब्दी के इस अंतिम चरण में आ कर समाजशास्त्रीय विनिमय सिद्धान्त ने सामाजिक मानवशास्त्र से भौतिक रूप में बहुत कुछ लिया है, बहुत कुछ सीखा भी है।

मानवशास्त्र में विनिमय सिद्धान्त

समाजशास्त्र में होमन्स और पीटर ब्लाऊ के विनिमय सिद्धान्तों के आने से पहले 19वीं शताब्दी के मध्य में मानवशास्त्री में विनिमय सिद्धान्त का प्रचलन था। प्रचलन ही क्यों, उसका एक विकसित स्वरूप उपलब्ध था। मानवशास्त्रीय विनिमय सिद्धान्त के प्रणेताओं में जेम्स जार्ज फ्रेजर (James George Frazer, 1954-94), मेलिनोस्की (Bronislaw Malinowski, 1984-1942), मार्शल मॉस (Marchel Mauss 1954), और लेवी स्ट्रॉस (Levi Strauss, 1967) के नाम विशेषरूप से उल्लेखनीय है। इन मानवशास्त्रियों ने आदिवासियों में गहन क्षेत्रीय कार्य किया और इसी आधार पर उन्होंने विनिमय सिद्धान्त को प्रतिपादित व विकसित किया है। यहां हम मानवशास्त्रीय विनिमय सिद्धान्त के इन विचारकों के योगदान का संक्षेप में उल्लेख करेंगे।

मानवशास्त्रीय विनिमय सिद्धान्त : सर जेम्स फ्रेजर का योगदान

फ्रेजर ने 1919 में अपनी पुस्तक *फोकलोर इन द ओल्ड टेस्टामेन्ट* (Folklore in the old Testament, 1919) में सबसे पहली बार अपनी उपलब्धियों का , जो आस्ट्रेलिया के आदिवासियों में क्षेत्रीय कार्य किया, विवेचन किया है। मानवशास्त्रीय विनिमय सिद्धान्त का यह सबसे पहला प्रयास था। फ्रेजर ने आदिम जातियों में बंधुत्व व विवाह की जो परम्परायें थी, उन्हें गहराई से देखा। उन्होंने इन आदिम जातियों में एक खटकने वाली बात पायी। ये आदिम जातियां *सलिंग सहोदर संतति विवाह* (Parallel Marriage) की तुलना में *चचेरे-ममेरे भाई-बहिनों* (Cross-cousin Marriage) के विवाह को बराबर अधिक पसन्द करते थे। उन्होंने स्वयं से सवाल पूछा : यह किस कारण है कि आदिम जाति के सदस्य चचेरे-ममेरे भाई-बहिनों के विवाह को पसन्द करते हैं? यह क्या बात है कि लगभग सभी

आदिम जातियां पेरेलल कजिन विवाह को लगभग वर्जित समझती हैं? इन प्रश्नों के उत्तर ने ही अन्त में चलकर विनिमय सिद्धान्त को स्थापित किया है।

बात यह है कि इन आदिवासियों के पास विवाह करने के लिये जो वधू मूल्य चाहिये, वह नहीं था। उनके पास सम्पत्ति जैसी कोई वस्तु ही नहीं थी, जिसके बदले में या जिसे चुकाकर वे अपने लिये पत्नी ला सकें आदिवासियों में पत्नी लाने की तीव्र अभिलाषा और सम्पत्ति का अभाव इन दोनों बातों ने चचेरे-ममेरे भाई-बहनों के विवाह को प्रोत्साहित किया। *यह आर्थिक अभिप्रेरण (Economic Motive) संस्कृति के प्रतिमानों को निश्चित करता है। फ्रेजर के अनुसार किसी भी समाज में जो सांस्कृतिक प्रतिमान उपलब्ध हैं, वे और कुछ न होकर मनुष्यों के आर्थिक अभिप्रेरण की अभिव्यक्ति मात्र हैं।*

जब फ्रेजर ने आदिवासियों की चचेरे-ममेरे भाई बहिनों के विवाह की व्याख्या की तब उन्होंने निम्न निष्कर्ष प्रस्तुत किये :

1. विनिमय प्रक्रियाएं बुनियादी आवश्यकताओं की पूर्ति करती हैं।
2. विनिमय प्रक्रियाओं के परिणामस्वरूप अन्तःक्रिया के प्रतिमान निर्धारित होते हैं। जब समाज के अधिकांश व्यक्ति चचेरे-ममेरे भाई-बहिनों का विवाह ही सर्वसम्मत विधि मानते हैं तो लोगों में अन्तःक्रियाओं का प्रतिमान ही ऐसा बन जाता है।
3. इस तरह के सांस्कृतिक प्रतिमान यानि अन्तःक्रिया की पद्धतियां जहां एक ओर व्यक्तियों की आवश्यकताओं की पूर्ति करती हैं, वहीं ऐसा ही व्यवहार करने के लिये व्यक्ति पर दबाव भी डालती है। इन सांस्कृतिक प्रक्रियाओं के पीछे अनिवार्यतः आर्थिक अभिप्रेरण होते हैं।

फ्रेजर का मानवशास्त्रीय विनिमय सिद्धान्त वैसे सरल दिखता है, पर इसका निर्वचन दूरगामी है। उदाहरण के लिये प्रारम्भिक विनिमय प्रक्रियाएं लम्बी अवधि में जाकर समाज में जटिल प्रतिमानों को जन्म देती हैं। इन विनिमय प्रक्रियाओं के कारण समाज में शक्ति और विशेषाधिकारों का मुद्दा पैदा होता है। वे समूह जिनके पास अधिक आर्थिक सुविधाएं हैं, उन लोगों पर अपना प्रभाव डालते हैं जिनके पास कम आर्थिक सुविधाएं हैं। इसका मतलब हुआ आदिवासी समाज में स्तरीकरण की शुरूआत हो गयी। इस तरह चचेरे-ममेरे भाई-बहिनों के विवाह ने स्त्रियों की प्रतिष्ठा को बढ़ावा दिया और स्त्रियों के परिवार की आर्थिक स्थिति में सुधार किया। एक तरह से स्त्रियों का उच्च आर्थिक व व्यापारिक मूल्य बढ़ गया और दूसरी तरफ स्त्रियों की प्रतिष्ठा भी बढ़ गयी। एक आदमी जिसके बहिने या लड़कियां हैं, वह धनवान बन जाता है और दूसरी ओर वह आदमी जिसके कोई बहिन या लड़की नहीं है गरीब बना रहता है। उसके लिये तो पत्नी का जुगाड़ करना भी आसमान के तारे तोड़ना है।

फ्रेजर का मानवशास्त्रीय विनिमय सिद्धान्त अर्थशास्त्र के उपयोगितावाद से बहुत अधिक प्रभावित है। यह कहना बहुत कठिन है कि फ्रेजर ने आधुनिक समाजशास्त्रीय विनिमय सिद्धान्त को कहां तक प्रभावित किया है, फिर भी यह निश्चित रूप से कहा जाना चाहिये कि

फ्रेजर पहले विचारक थे जिन्होंने आदिवासियों में किये गये क्षेत्रीय कार्य के आधार पर पहली बार स्वतन्त्र पद्धति से विनिमय सिद्धान्त को प्रतिपादित किया।

मेलिनोस्की का योगदान

यह प्रायः कहा जाता है कि फ्रेजर ने उपयोगितावाद पर आधारित जिस विनिमय सिद्धान्त को बनाया था, मेलिनोस्की ने उसके बखिये उधेड़ दिये, उसे बदल दिया। *जहां फ्रेजर विनिमय सिद्धान्त का आधार आर्थिक अभिप्रेरण मानते हैं, वहां मेलिनोस्की विनिमय का बुनियादी आधार गैर-भौतिक (Non-Material) यानि सांस्कृतिक मानते हैं*। मेलिनोस्की फ्रेजर के बहुत निकट थे, दोनों समकालीन थे, फिर भी उन्होंने फ्रेजर के विनिमय सिद्धान्त को उलट-पटल दिया। मेलिनोस्की की तो विनिमय सिद्धान्त के बारे में एक पक्की धारणा है कि विनिमय सामाजिक सुदृढ़ता को कायम करता है। सच्चाई यह है कि मेलिनोस्की ने भौतिक या आर्थिक विनिमय को सांस्कृतिक या प्रतीकात्मक विनिमय से पृथक किया। और यही मेलिनास्की का फ्रेजर से विरोध है। वे दूसरी महत्वपूर्ण बात यह कहते हैं कि जब *आदिम समाजों के सदस्यों में सांस्कृतिक या सामाजिक विनिमय होता है तो उसके पीछे कहीं भी आर्थिक अभिप्रेरण नहीं होता*। यदि कोई अभिप्रेरण है तो यह मनोवैज्ञानिक है।

मेलिनोस्की ने ट्रोब्रिएण्ड (Trobriand) टापू में रहने वाले आदिवासियों में क्षेत्रीय कार्य किया है। वहां के आदिवासियों में उन्होंने विनिमय सम्बन्धों को पाया। ये आदिवासी समूह कई टापुओं में बंटे हुये हैं। विनिमय द्वारा अगणित टापुओं के विभिन्न जनजाति समूहों में सुदृढ़ता बनी रहती है। मेलिनोस्की ही नहीं मार्शेल मॉस और लेवी-स्ट्रॉस भी आग्रहपूर्वक कहते हैं कि आदिवासी समूह पारस्परिक आदान-प्रदान यानि विनिमय द्वारा अपने बीच बराबर सामाजिक सम्बद्धता (Social Cohesion) बनाये रखते हैं। उनमें भेंट (Gift) की प्रथा बहुत महत्वपूर्ण है। वास्तव में इस समाज की स्थापना ही इस कानून पर हुई है कि समाज में पारस्परिक सेवाओं द्वारा सुदृढ़ता बनाये रखी जायेगी। इन समाजों में जो भी विभाजीकरण है–टोटेम में, बन्धुत्व में और स्थानीय गांवों में, उसे सम्बद्ध रखने का काम आपसी लेन-देन ही है। अपने लोगों के बीच भी यह पारस्परिक लेन-देन (Give and Take) का सिद्धान्त बड़ी खूबी से काम करता है।

मेलिनोस्की ने पाया कि इन विभिन्न आदिम जातीय समूहों में भेंट देने की परम्परा है। इस व्यवस्था को मेलिनोस्की *कुला* (Kula) व्यवस्था कहते हैं। निश्चित अवधि में एक टापू के आदमी अपनी किश्ती में बैठकर दूसरे टापू में जाते हैं। इस टापू के निवासियों से वे मिलते हैं। उनसे वे घोंघें के नेकलेस लेते हैं और बदलें में अपनी ओर से बाजूबन्द देते हैं। मतलब हुआ : बाजूबन्द भेंट में देना और बदले में गले का नेकलेस लेना। दूसरे शब्दों में बाजू बन्द भेंट में दीजिये और नेकलेस भेंट में लीजिये। ये बाजूबन्द और नेकलेस बहुत महंगे होते हैं, मूल्यवान होते हैं। लेकिन इन जेवरों की निश्चित रूप से कोई भौतिक उपयोगिता नही है। होता यह था कि दोनों टापुओं के आदिवासी अपनी भेंट को भविष्य के

लिये संभाल कर रखते थे और जब कभी मौका पड़ता इनका फिर से विनिमय कर लेते। इस *कुला* (Kula) रिंग में यह जवाहरात साल-दर साल उसी उत्सव में काम आते थे।

मेलिनास्की ने मानवशास्त्रीय विनिमय सिद्धान्त को जो नया क्षितिज दिया, वह यह है कि *विनिमय अनिवार्य रूप से आर्थिक कारणों से नहीं होता, इसके पीछे सामाजिक और अन्य प्रकियाएं भी काम करती हैं।* मेलिनोस्की का आधुनिक विनिमय सिद्धान्त पर दूरगामी प्रभाव पड़ा है :

1. मेलिनोस्की की कुला रिंग की अवधारणा इस सिद्धान्त को नकारती है कि आदमी सदैव विवेकी नहीं होता। वह हर तरह से अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति नहीं करना चाहता। उसकी क्रियाओं के पीछे सामाजिक सुदृढ़ता, एकीकरण, प्रतिबद्धता आदि कारक भी होते हैं।
2. जहां फ्रेजर आर्थिक उपयोगितावादी यह मानकर चलते हैं कि आदमी बुनियादी रूप से स्वार्थी है और वह अधिकतम लाभ के लिये विनिमय करता है। मेलिनोस्की का तर्क जो आनुभविकता पर निर्भर है, कहता है कि *आर्थिक आवश्यकताओं की अपेक्षा मनोवैज्ञानिक आवश्यकताएं इतनी ताकतवर होती हैं कि वे न केवल विनिमय को जन्म देती हैं, वरन् उसे सुदृढ़ता व स्थायित्व भी प्रदान करती हैं। दूसरे शब्दों में विनिमय के पीछे मनोवैज्ञानिक प्रक्रियाएं आर्थिक आवश्यकताओं की अपेक्षा अधिक महत्वपूर्ण हैं।*
3. प्रतीकात्मक विनिमय सम्बन्ध बुनियादी सामाजिक प्रक्रियाएं हैं जो हमें सामाजिक स्तरीकरण और एकीकरण दोनों में देखने को मिलती हैं।

मेलिनोस्की से पहले फ्रेजर ने विनिमय व्यवहार को उपयोगितावाद के घेरे तक सीमित कर दिया था। मेलिनोस्की ने विनिमय सिद्धान्त को इस घेरे से मुक्त कर दिया। उन्होंने दूसरे शब्दों में, एक मुक्त विनिमय सिद्धान्त को प्रस्तुत किया। उन्होंने इस तथ्य पर जोर दिया की व्यक्ति की मनौवैज्ञानिक प्रक्रियाओं और सामाजिक एकीकरण के प्रतिमानों में प्रतीकात्मक विनिमय का महत्वपूर्ण स्थान है। इस तरह अण्ने सम्पूर्ण विश्लेषण में मेलिनोस्की दो बातों पर जोर दिया। *पहली तो यह कि* विनिमय का आधार मनोवैज्ञानिक प्रक्रियाएं हैं और *दूसरी* यह कि इन प्रक्रियाओं के कारण सांस्कृतिक और संरचनात्मक विनिमय सम्बन्ध पैदा होते हैं।

मार्शल मॉस का योगदान

मानवशास्त्रीय विनिमय सिद्धान्त का अब तक जो विकास हुआ उसका निष्कर्ष यह है कि *फ्रेजर ने विनिमय के पीछे आर्थिक या उपयोगितावादी अभिप्रेरण को मुख्य कारण समझा था।* मेलिनोस्की ने इस तरह के विश्लेषण को नया क्षितिज दिया। उनके अनुसार *विनिमय का निश्चित कारण मनोवैज्ञानिक है।* अब यहां आकर मार्शल मॉस ने विनिमय का विश्लेषण विनिमय संरचनावाद (Exchange Structuralism) द्वारा किया है। मॉस का आरोप है कि मेलिनोस्की